क) काकमुशुण्डि और गरुड संवाद ।

## (३) काकभुशुण्डि और गरुड संवाद

`रामचरितमानस` के तीसरे वक्ता और श्रोता काकभुशुण्डि और गरुड हैं। इस संवाद के माध्यम से तुलसीदासजी ने काकभुशुण्डि के पूर्व जन्मों के वर्णन में ही राममक्ति का प्रतिपादन किया है। इस संवाद के अंतर्गत `रामचरितमानस` की कथावस्तु का संक्षिप्त रूप में वर्णन किया है। उसके साथ-साथ मोह, तृष्णा, लोभ, काम, मत्सर, चिन्ता आदि मनोविकारों का प्राबल्य निरूपण, राम की अलौकिकता और कलियुग का वर्णन है। काकभुशुण्डि के शिव-भक्त गुरु की महिमा तथा विष्णुभक्ति एवं शिव-भक्ति का समन्वय आदि अनेक प्रसंग इसमें सुनियोजित हैं। तुलसीदासजी का मूल उद्देश्य राममक्ति का प्रतिपादन करना ही है। इसी उद्देश्य पूर्ति के लिए तुलसीदासजी ने काकभुशुण्डि द्वारा विभिन्न प्रसंगों की रचना की है।

तुलसीदासजी ने इस संवाद में राम के पूर्ण ईश्वरत्व के विश्वास को अधिक दृढ बनाने के लिए ही काकभुशुण्डि के द्वारा गरुड को राम की महिमा बतायी है, जिससे रामसंबंधी भागवत शंकाके लिए कोई स्थान न रह पाये। यह संवाद `उत्तरघाट` का प्रतीक है। इसमें भक्ति का निरूपण हुआ है इसलिए इस संवाद को `भक्तिघाट` कहते हैं।

तुलसीदासजी ने इस संवाद में काकभुशुण्डि की जन्मान्तरवाली कथा द्वारा यह प्रकट कर दिया है कि लोकमर्यादा और शिष्टता के उल्लंघन को वे कितना बुरा समझते थे और यह भी बताया है कि अभिमान मनुष्य को पतन की ओर ले जाता है और अज्ञानी बना देता है। इस अभिमान के कारण लोगों को अपनी कमजोरियाँ दिखाई नहीं देतीं।

इस संवाद में तुलसीदासजी ने गरुड के उस मोह का वर्णन किया है, जिस मोह में ब्रह्मा, नारद जैसे बडे-बडे ज्ञानी भी वशीभूत हुए थे। इस मोह ने पार्वती को भी राम-ब्रह्म विषयक प्रश्न पूछने को प्रेरित किया था वह हमने शिव-पार्वती संवाद में देखा है। उसी मोह के कारण गरुड को भी राम ब्रह्म विषयक संदेह हुआ है।

इस संवाद के वक्ता परमश्रेष्ठ राम भक्त काकभुशुण्डि है और श्रोता भगवान विष्णु को वाहन पक्षिराज गरुड है। ये दोनों पक्षी-योनि के हैं। गरुड जिज्ञासु भक्त है। राम रावण युध्द में राम को नाग-पाश में बध्द करके गरुड द्वारा उनकी मुक्ति करके गरुड के हृदय में राम के ब्रह्मत्व के विषय में उत्पन्न शंका इस प्रसंग को उठाकर तुलसीदास ने काकभुशुण्डि-गरुड संवाद की पृष्ठभूमि तैयार की है।

गरुड के मन में यह संदेह होता है कि - जिस राम का मुनि लोग ध्यान करते हैं, जो अनादि, अजन्मा, अन्तर्यामी हैं, उन्हें रादास ने नागपाश में बाँध लिया यह कैसे हो सकता है ? -

" बंधन काटि गयो उरगादा। उपजा हृदय प्रचंड विषादा।
प्रभु बंधन समुझत बहु भाँति। करत बिचार उरग आराति।।
व्यापक ब्रह्म बिरज बागीसा। माया मोह पार परमीसा।
सो अवतार सुनेऊँ जग माही। देखेऊँ सो प्रभाव कछु नाही।
भव बंधन ते छूटहि नर जपि जाकर नाम।
खर्व निसाचर बाँधेऊ नागपाश सोइ राम।।"[१]

इसप्रकार गरुड ने अनेक तर्क-वितर्क किये, लेकिन भ्रम दूर नहीं हुआ। भ्रम के आधिक्य से व्याकुल होकर वह नारदजी के पास गया। नारद ने उसे ब्रह्मा के पास भेजा और ब्रह्मा ने उसे शिवजी के पास भेज दिया। शिवजी ने

उसके अहंकार का नाश करने के लिए काकभुशुण्डि के पास भेजा दिया। क्योंकि दोनों पक्षी योनि के और सजातीय होने के कारण एक दूसरे की भाषा को भी जानते हैं इन्हीं दो कारणोंसे शिवजी ने गरुड को काकभुशुण्डि के पास भेज दिया।

इस संभाषण का स्थान है सुमेर-गिरि की उत्तर दिशा में एक सुन्दर नील पर्वत पर एक वटवृक्ष के नीचे। वहाँ अत्यंत बुध्दिमान और पूर्ण भक्तिवाले काकभुशुण्डिजी रहते थे। वे हरोज राम के चरित्र का वर्णन करते हैं। वहाँ इस सुन्दरचरित्र को सुनने के लिए विभिन्न पक्षी आते थे। पक्षियों के राजा गरुडजी को आते देखकर काकभुशुण्डिसहित सभी पक्षी हर्षित हो गये।

गरुडजी काकभुशुण्डिजी से कहते हैं, " हे तात, श्रीरामजी की अत्यन्त पवित्र सदा सुख देने वाली और दु:ख का नाश करनेवाली कथा कहिये। "

तब गरुडजी को काकभुशुण्डिजी ने पहले " रामचरितमानस " सरोवर " का रूपक समझाया। उसके बाद श्री राम की बाललीला से लेकर अवतार की कथा का वर्णन किया फिर राम का विवाह, उसके बाद, राजत्याग, रावण वध और अयोध्यागमन फिर राज्याभिषेक का वर्णन करके उनकी राजनीति का परिचय दिया।

काकभुशुण्डिजी कहते हैं, " हे पक्षीराज, मोह के बहाने श्रीरघुनाथजी ने आपको यहाँ भेजकर मुझे बडप्पन दिया है। आप को मोह हो गया यह कुछ आश्चर्य की बात नहीं है क्योंकि शिव, नारद, और ब्रह्माजी जो आत्मतत्व के मर्मज्ञ हैं उन्हें भी मोह ने अंधा किया है। जगत् में ऐसा कौन है जिसे काम ने न बचाया हो.? क्रोध ने किस का हृदय नहीं जलाया ? इस संसार में ऐसा कौन है ज्ञानी, तपस्वी, शूरवीर, कवि, विद्वान और गुणों का धाम है,

जिसकी लोभ ने विडम्बना न की हो ? ऐसा कौन है जिसे युवा स्त्री के नेत्रबाण न लगे हो ? ऐसा कोई नहीं है जिसे मान और मद ने अछूता छोडा हो ? ममता ने किस के यश का नारा नहीं किया ? जगत् में ऐसा कोई भी नहीं है जिसे माया ने व्याप्त किया नहीं ? यह संसार माया का बडा बलवान परिवार है । काम, क्रोध और लोभ उसके सेनापति हैं और दम्भ, कपट उसके योध्दा हैं । वह रघुवीर की दासी है । हे गरुडजी, श्रीराम की कृपा के बिना इस माया और मोह का नाश नहीं होता इसलिए राम की भक्ति करो । "

राम की महिमा बताते समय काकभुशुण्डिजी कह रहे हैं - " श्रीरामजी वही सच्चिदानन्द घन हैं, जो अजन्मा, विज्ञानस्वरूप, अखण्ड तथा अनन्त हैं । वे निर्गुण, ममतारहित, मायारहित, सुख की राशि, सदा सब के हृदय में बसने वाले अविनाशी ब्रह्म हैं । भगवान श्रीराम ने भक्तों के कल्याण के लिए मनुष्य अवतार लिया है । हे गरुडजी, श्रीरघुनाथ की यह लीला है, जो राक्षसों को विशेष मोहित करनेवाली और भक्तों को सुख देनेवाली है । जो काम, क्रोध और मद में व्याप्त हैं, वे श्रीरघुनाथ को नही जान सकते । वे अज्ञानरूपी अन्धकार में पडे हुए हैं ।

सगुण और निर्गुण के बारेमें काकभुशुण्डिजी कहते हैं -

" निर्गुण रूप सुलभ अति, सगुन जान नहिं कोइ ।
सुगम अगम नाना चरित, सुनि मुनि मन भ्रम होइ ।। "[२]

राम की प्रभुता के साथ-साथ वे अपने मोह की कथा गरुडजी से कह रहे हैं - जब जब श्रीरामचन्दजी मनुष्य का शरीर धारण करते हैं और भक्तों के लिए बहुत सी लीलाएँ करते हैं तब-तब मैं अयोध्यापुरी जाता हूँ और उनकी बाललीला देखता हूँ । "

" बालरूप श्रीरामचन्दजी मेरे इष्टदेव हैं। जिनके शरीर मे अरबों कामदेवों की शोभा है। कौए का शरीर धारण करके भगवान के साथ घूमकर मैं उनके बाल चरित्र को देखता हूँ। लड़कपन में वे जहाँ-वहाँ घूमते हैं, वहाँ-वहाँ मैं उनके साथ जाता हूँ। "

काकभुशुण्डिजी राम का स्वरूप वर्णन कर रहे हैं, - " श्रीराम बहुत ही सुन्दर हैं। उनका शरीर कोमल है। उनके अंग-अंग में बहुत से कामदेवों की शोभा छायी हुई है। उनके चरण कोमल हैं। उनकी अंगुलियाँ सुंदर हैं। नीलकमल के समान उनके नेत्र हैं। उनके सिर पर धुंघराले बालों की शोभा है। श्रीरामजी की साधारण बच्चों जैसी लीला देखकर मुझे मोह होता है कि प्रभु ये कौनसी लीला कर रहे हैं। हे गरुडजी, मन में इतनी शंका के आते ही रघुनाथजी के द्वारा प्रेरित माया मुझपर छा गयी। "

" अभिमानी जीव माया के वश में है। और यह माया भगवान के वश में है। भगवान के भजन बिना इस माया से मोक्षपद चाहनेवाला मनुष्य ज्ञानवान होने पर भी बिना पूँछ और सिंग का पशु है। श्रीहरि के सेवक को यह माया नहीं व्यापती। "

डॉ.श्रीशकुमार के मता नुसार " माया का अविद्या रूप जीव को संसार के मोहजाल में उलझा देता है और इसके वशीभूत होकर जीव अज्ञान में फँसा रहता है। तुलसी का मायावाद शंकर के मायावाद की प्रतिकृति है।"[३]

इसप्रकार माया का विद्या रूप प्रभु से प्रेरित रहता है। विद्या-माया के द्वारा प्रभु संसार की सृष्टि करते हैं। माया का विद्या रूप ही जीव को ईश्वर भक्ति की ओर उन्मुख करता है। इसलिए यह माया कष्टदायिनी नहीं है -

" एतना मन आनत खगराया । रघुपति प्रेरित व्यापी माया ।
सो माया न सुखद मोहि काही । आन जीव स्व संसृत नाही ।।"[१]

हे गरुडजी, श्रीरामजी ने मुझे भ्रम से चकित देखा तब वे हँसे वह कथा सुनिये –

" भगवान के खेल का मर्म किसी ने नहीं जाना । न छोटे भाईयों ने और न माता-पिता ने । वे श्याम शरीर बालक राम घुटने और हाथों के बल से मुझे पकड़ने को दौडते हैं । तब मैं भाग जाता । उसी समय श्रीरामजी ने मुझे पकडने के लिए भुजा फैलायीं । मैं जैसे-जैसे आकाश में दूर उडता गया वैसे-वैसे वहाँ भी श्रीहरि की भुजा को अपने पास देखता था । ऐसे ही मैं ब्रह्मलोक तक गया और जब मैंने पीछे देखा, तो श्रीराम की भुजा में और मुझ में बहुत ही कम अंतर बाकी था । यह देखकर भयभीत होकर मैंने आँखें मूंद लीं । फिर आँखें खोलीं तो मैं अवधपुरी में पहुँच गया था । मुझे देखकर श्रीराम मुसकराने लगे । उनके हँसने से मैं तुरंत ही उनके मुँह में चला गया । उनके पेट में मैंने बहुत से ब्रह्माण्ड देखे । करोडों ब्रह्माजी और शिवजी, अनगिनत तारागण, सूर्य और चन्द्रमा, असंख्य पर्वत, भूमि और नाना प्रकार की सृष्टि का विस्तार देखा । देवता, मनुष्य, नाग, मुनि तथा चारों प्रकार के चेतन और जड जीव देखे । जो कभी न देखा था, सुना था ऐसी अद्भुत सृष्टि को मैंने देखा । "

" मैं एक-एक ब्रह्माण्ड में सौ-सौ वर्ष तक रहता था । इसप्रकार मैंने अनेक ब्रह्माण्ड देखे । मैंने प्रत्येक ब्रह्माण्ड में श्रीराम के अवतार देखे । सभी जगह रामचंद्रजी का एक ही रूप देखा । अनेक ब्रह्माण्डों में घूमते हुए एक सौ कल्प बीत गये । घूमते-घूमते मैं अपने आश्रम में पहुँचा । फिर जब प्रभु ने अवधपुरी में अवतार रूप में, जन्म लिया है, यह सुना तो वहाँ जाकर मैंने जन्मो

महोत्सव और भगवान की लीलाएँ देखीं। हे गरुडजी, समय मेरी बुद्धि मोहरूपी कीचड से व्याप्त थी। यह सब मैंने दो ही घडी में देखा। मन में विशेष मोह होने के कारण मैं भ्रमित हो गया। तब मुझे व्याकुल होकर कृपालु रघुवीर हँसे। उनके हँसते ही मैं मुँह से बाहर आ गया।"

"इसप्रकार श्रीराम की प्रभुता का स्मरण कर मैं शरीर की सुध को भूल गया और व्याकुल होकर पृथ्वीपर गिरपडा। प्रभुने मुझे प्रेम-विव्हल देखकर अपने कर-कमल मेरे सिरपर फेरकर मेरे सब दु:ख और माया को हर लिया।"

"भगवान ने मुझे सच्चा भक्त जानकर रिध्दि, सिध्दि, मोक्ष, ज्ञान, विवेक और वैराग्य के साथ अनेकों गुण दे दिये, जो जगत् में मुनियों के लिये भी दुर्लभ हैं। उस समय भगवान ने मुझे वरम माँगने के लिये कहा। तब मैंने यह विचार किया कि, भक्ति से रहित सब गुण और सब सुख वैसे ही व्यर्थ हैं, जैसे बिना नमक का भोजन। राम भक्ति से रहित सुख किस काम के ? -

"भगति हीन गुन सब सुख ऐसे। लवन बिना बहु बिंजन जैसे।
भजन हीन सुख कवने काजा। अस बिचारि बोले उँ खगराजा ।।"[5]

यह सोचकर मैंने कहा, - "हे कृपासागर, श्रीरामजी, आपकी जिस अविरल भक्ति को पुराण गाते है, जिसे योगीश्वर, मुनि खोजते हैं, दया करके वही भक्ति मुझे दे दीजिये। तब भगवान ने मुझे वही भक्ति दे दी।"

तुलसी की भक्ति समाज को आदर्श आचरण का उपदेश एवं सन्देह देती है। "तुलसी की भक्ति अकर्मण्य, परावलम्बी एवं निस्तेज बना देनेवाली नहीं, वह तो उसे सतत कर्मयोगी एवं तन-मन-वचन से लोकमंगल साधना के निमित्त निरन्तर सचेपर एवं जागरूक रहने कीप्रबल प्रेरणा प्रदान करती है।"[6]

` हे गरुडजी, भगवान ने मुझसे कहा, ` भक्ति, ज्ञान, विज्ञान, वैराग्य और मेरी लीलाएँ इन सब के भेद को तू मेरी कृपा से जान जायेगा। हे काक, तू भक्त मुझे निरन्तर प्रिय है, इसीलिए शरीर, बचन और मन से मेरे चरणों में अटल प्रेम करना। यह सारा संसार माया से उत्पन्न है। उनमें अनेक जीव हैं। मुझे अपने सेवक के समान अन्य कोई भी प्रिय नहीं है। भक्ति हीन ब्रह्म ही क्यों न हो, वह भी मुझे प्रिय नहीं है, लेकिन भक्तिमान अत्यन्त नीच भी प्राणी मुझे प्राणों के समान प्रिय है। पवित्र, सुशील और बुध्दिमान सेवक बता किस को प्यारा नहीं लगता ? इसप्रकार पवित्र और निष्काम सेवक मुझे प्राणों के समान प्रिय है। ऐसा विचार कर के सब आशा, भरोसा छोडकर मुझे भजो। तब मुझे काल भी नही व्यापेगा।

` इसप्रकार मुझे समझाकर वें फिर वही बाललीला करने लगे। तब मैं अवधपुरी में कुछ समय तक रहा रहा। श्रीरामजी की कृपा से मैंने भक्ति का वरदान पाया और उसके बाद मैं अपने आश्रम में लौट आया। `

इस कथन द्वारा तुलसीदासजी ने काकभुशुण्डि के मोह जनित स्वानुभूति के प्रसंग को दिखाकर प्रभु रामचंद्रजी की महिमा गायी है। वे कहते हैं कि प्रभु की माया सभी ओर व्याप्त है। उससे छुटकारा पाने के लिए भगवान की भक्ति करनी चाहिए, क्योंकि माया भगवान की भक्ति करनेवाले के वश हो जाती है। तुलसीदासजी ने श्रीराम के मुख में ब्रह्माण्ड और सृष्टि को दिखाकर भगवान की व्यापकता को साबित किया है। वे भक्त मे उच्च और नीच का भेद नहीं करते। लेकिन वे कहते हैं कि बडों को अपने बडत्व के अहंकार को छोडकर भगवान की भक्ति करनी चाहिए उसी में सभी का हित है।

उसके बाद काकभुशुण्डि कहते हैं -

" निज अनुभव अब कहउँ खगेसा । बिनु हरि भजन न जाहि कलेसा ।
राम कृपा बिनु सुनु खगराई । जानि न जाइ राम प्रभुताई ।। "[७]

इसप्रकार तुलसीदासजी काकभुशुण्डि के द्वारा कहते हैं, " भगवान के भजन बिना क्लेश दूर नहीं होता । " काकभुशुण्डि आगे कहते हैं, " गुरू के बिना ज्ञान नहीं हो सकता और वैराग्य के बिना ज्ञान नहीं हो सकता उसीप्रकार वेद और पुराण कहते हैं कि श्रीहरि की भक्ति के बिना सुख नहीं मिल सकता ।"

" भगवान की भक्ति के बिना कामनाएँ नहीं मिट सकतीं । जैसे बिना धरती के कहीं पेड उग सकता है ? जल के बिना इस संसार में रस नहीं हो सकता और श्रध्दा के बिना धर्म नहीं हो सकता । बिज सुख के बिना मन स्थिर नहीं हो सकता । उसीप्रकार श्रीहरिके भजन-बिना जन्म-मृत्यु के भय का नाश नहीं होता । इसलिए हे पदिाराज, सभी कुतर्कों और सन्देहों को छोडकर करूणा की खान सुन्दरता और सुख देनेवाले श्रीरघुनाथजी का भजन कीजिये ।"

तुलसीदासजी ने यहाँ काकभुशुण्डि के द्वारा कहा है -

" महिमा नाम रूप गुन गाथा । सकल अमित अनंत रघुनाथा ।
निजि निज मति हारि गुन गावहिं । निगम सेष्त सिव पारन पावाह ।"[८]

" भक्ति, व्यक्ति का मानसिक परिष्कार है और मानसिक रूप से परिष्कृत व्यक्ति ही समाज को उन्नति की ओर अग्रेसर करता है ।"[९] ऐसा डॉ. चरण सही शर्मा तुलसी की भक्ति के बारेमें कहते हैं ।

काकभुशुण्डि राम की महिमा गरूड को सुनाते हैं, -" श्रीरामजी करोडों हिमालायों के समान अचल और समुद्र के समान गहरे हैं । उनमें अनन्त कोटि सरस्वतियों की चतुरता है और ब्रह्मा के समान सृष्टि रचना की निपुणता

है। वे विष्णु के समान पालन करनेवाले और रुद्र के समान संहार करने करनेवाले हैं। वे अत्यन्त कृपालु हैं। अत: ममता, मद और अभिमान को छोड़कर सदा श्रीराम की भक्ति करो।"

इसप्रकार काकभुशुण्डिजी द्वारा राम की महिमा सुनकर गरुडजी बहुत ही प्रसन्न हो गये। गरुडजी कहते हैं, " आपकी कृपा से मेरे मोह का नाश हो गया और मैंने श्रीरामजी का अनुपम रहस्य जाना।"

उसके बाद गरुडजी ने प्रेम पूर्वक विनम्र वाणी में कहा, - " आप सब जाननेवाले, तत्व के ज्ञाता, माया से परे, उत्तम बुध्दि से युक्त, सुशील, सरल आचरणवाले, ज्ञान, विज्ञान और वैराग्य के धाम श्रीरघुनाथजी के प्रिय दास हैं। अत: आपने यह काकशरीर किस कारण पाया : और यह सुन्दर `रामचरितमानस` आपने कहाँ पाया ? हे नाथ, शिवजी से मैंने सुना है कि महाप्रलय में भी आपका नाश नहीं होता यह कैसे ? और अत्यन्त मर्यकर काल भी आपको नहीं व्यापता इसका क्या कारण है ? हे प्रभो, आपके आश्रम में आते ही मेरा मोह और भ्रम भाग गया इसका कारण क्या है ? हे नाथ, प्रेमसहित मेरी इन शंकाओं का निराकरण कीजिए।

गरुडजी के प्रेमयुक्त प्रश्न सुनकर काकभुशुण्डिजी को अपने पूर्व जन्मों की याद आ गयी और वे अपने जन्मों की कथा विस्तार से कहने लगे -

" हे गरुडजी, अनेक तप, जप, यज्ञ, व्रत, दान और योग आदि सब का फल श्रीरघुनाथजी के चरणों में प्रेम करने से मिलता है। इसके बिना कोई कल्याण नहीं पा सकता। मैंने इस शरीर से श्रीरामजी की भक्ति प्राप्त की है इस कारण इस शरीर पर मेरी ममता अधिक है। जिससे अपना कुछ स्वार्थ होता है उस से सभी प्रेम करते हैं।"

" हे गरुडजी, वेदों ने ऐसी नीति मानी है कि, अपना परमहित जानकर अत्यन्त नीच से भी प्रेम करना चाहिए। जीव के लिए सच्चा स्वार्थ यही है कि मन, वचन और कर्म से श्रीराम के चरणों में अपनी प्रीति लगाये। वह शरीर पवित्र है जिसने श्रीरघुनाथजी का भजन किया है।"

" मेरी मृत्यु अपनी इच्छापर आधारीत है, परंतु मैं यह शरीर नहीं छोडता। पहले मोह ने मेरी दुर्दशा की थी। तब श्रीराम से विमुख होकर मैं कभी सुख से नहीं सोया। अनेक जन्मों में मैंने अनेक प्रकार के जप, तप, योग, यज्ञ और दान आदि कर्म किये हैं। जगत् में कौनसी ऐसी योनि है जिसमें मैंने जन्म न लिया हो। लेकिन अब की तरह मैं सुखी नहीं हुआ। इसलिए सब छोडकर मैंने राममक्ति का स्वीकार किया।"

" हे गरुडजी, पूर्व कल्प में पापों का एक कलियुग था। जिसमें स्त्री-पुरुष सभी अधर्म परायण और वेद के विरोधी थे। उस समय मैं अयोध्या में जाकर शूद्र का शरीर पाकर जनमा था। तब मैं शिवजी का सेवक था और दूसरे देवताओं की निन्दा करता था। श्रीरघुनाथजी की महिमा मैंने नहीं जानी थी। लेकिन अब राम भक्ति को जान गया हूँ। वेद, शास्त्र के अनुसार किसी भी जन्म में जो कोई अयोध्या में बस जाता है, वह अवश्य ही राम का भक्त हो जाता है। लेकिन यह प्रभाव वह तभी जानता है, जब श्रीरामजी उनके हृदय में बसें।"

यहाँ तुलसीदासजी यह कहना चाहते हैं कि रामनाम मे दृढ विश्वास के लिए ईश्वर का स्मरण आवश्यक है और स्मरण, भजन या भक्ति के विषय प्रसिध्द विद्वान प्रेम शंकर का कथन है, " स्मरण के द्वारा मन के विकार धीरे-धीरे समाप्त हो जाते हैं और जीव अधिक निर्मल भावभूमि पर पहुँचता है।"[१०]

काकभुशुण्डि कलियुग का वर्णन कर रहे हैं, - कलियुग में सब धर्मों को पापों ने ग्रस लिया था। दम्भियों ने अपनी बुध्दि के अनुसार अनेक पंथ प्रकट कर दिये थे। सभी लोग मोह के अधीन हो गये थे।

कलियुग के धर्म के बारेमें काकभुशुण्डि कहते हैं, - ` कलियुग में न वर्ण धर्म रहता है, न चारों आश्रम। दूसरे का धन हरण करनेवाले को बुध्दिमान कहा जाता है, जो झूठ बोलता है, हँसी और दिल्लगी करता है उसे गुणवान कहा जाता है। दूसरों के अहित करनेवाले के आचरण का गौरव किया जाता है। जो मन, वचन और कर्म से झूठा है उसे कलियुग में वक्ता माना जाता है। `

` अभागिनी स्त्री पति को छोडकर पर पुरुष का सेवन करती हैं। सुहागिनी स्त्रियाँ तो आभूषणों से रहित होती हैं, पर विधवाओं के नित्य नये शृंगार होते हैं। गुरु और शिष्य में बहरे और अंधका-सा व्यवहार होता है। माता-पिता बालकों को बुलाकर वही धर्म सिखलाते हैं, जिससे पेट भर सके। `

` संन्यासी बहुत से धन को लोगों से छीनकर अपना घर सजाते हैं। उनमें वैराग्य नहीं रहा। उन्हें विषयों ने हर लिया है। कुलवती और पतिव्रता स्त्री को पुरुष घर से निकाल देते हैं और कुटिल दासी को घर में लाते हैं। धनी लोग मलीन होने पर भी कुलीन माने जाते हैं। कलियुग में बार-बार अकाल पडते हैं। अन्न के बिना सब लोग दु:खी होकर मर जाते हैं। हे पक्षिराज -

` सुनु खगेस कलि कपट दृढ दंभ द्वेष पाषंड।
मान मोह मारादि मद व्यापि रहे ब्रह्मांड॥ `[११]

` देवता पृथ्वीपर जल नहीं बरसाते इसलिए बोया हुआ बीज उगता नहीं। कोई व्यक्ति बहन और बेटी का विचार भी नहीं करता। लोगों में न संतोष है, न विवेक और न शीतलता है। समता चली गयी है। कलिकाल अवगुणों का घर है। इस युग में भगवान श्रीराम का सिर्फ नाम लेने से बिना परिश्रम भवबन्धन से छुटकारा मिल जाता है। `

` सत युग, त्रेतायुग और द्वापर में जो गति पूजा, यज्ञ और योग से प्राप्त होती है वह गति कलियुग में लोग केवल भगवान के नाम लेने से पाते हैं।`

` सतयुग में सब योगी और विज्ञानी होते हैं। हरि का ध्यान करके सब प्राणी भवसागर से तर जाते हैं। `

` त्रेतायुग में मनुष्य अनेक प्रकार के यज्ञ करते हैं और सब कर्मों को प्रभु के चररणों में समर्पित कर भवसागर से पार हो जाते हैं। `

` द्वापरम में श्रीरघुनाथजी के चरणों की पूजा करके मनुष्य संसार से तर जाते हैं। `

काकभुशुण्डिजी कहते हैं, - यदि मनुष्य विश्वास करें तो -

` कलिजुग सम जुग आन नहिं जौ नर कर बिस्वास।
गाइ रामु सुन गन बिमल भव तर बिनहि प्रयास ।। `[१२]

` हे पक्षिराज, धर्म के चार चरण हैं - सत्य, दया, तप और दान। कलियुग में एक दानरूपी चरण ही प्रधान है, जिन्हें किसी भी प्रकार से दिये जाने पर वह दान कल्याण ही करता है।`

` प्रेतायुग में सत्वगुण अधिक होता है और रजोगुण कम होता है इसी समय लोगों की कर्मों में प्रीति होती है। `

` द्वापर में रजोगुण अधिक होते हैं और सत्वगुण कम होते हैं। लेकिन कलियुग में तमोगुण अधिक, रजोगुण कम होते हैं। इसलिए श्रीरघुनाथजी के चरणों मे जिनका अत्यन्त प्रेम है, उन्हें काल धर्म भी नहीं व्यापते। अत: सभी कामनाओं को छोडकर निष्काम भाव से रघुनाथजी का भजन करना चाहिए।`

यहाँ तुलसीदासजी ने काकभुशुण्डि के द्वारा कलियुग का वर्णन करके समकालीन लोगों की अनीति और व्यवहार का परिचय दिया है। उसी प्रकार कौन से युग में कौन से गुण की प्रधानता होती है, यह भी बतलाया है। तात्पर्य यह है कि चाहे युग कोई भी हो, भगवान की भक्ति करने से मनुष्य में हमेशा सतोगुण ही रहते है। श्रीरामजी की कृपा से सभी बुरे गुणों का नाश होकर अच्छे गुणों की प्राप्ति होती है और इस संसाररूपी भवसागर में वही भवत तर जाते हैं जो श्रीरामजी को भजते हैं। इसप्रकार सभी युगों में राम की भक्ति ही श्रेष्ठ साधन है, जो हमें नीति और व्यवहार सिखाती है, जिससे भवसागरसे छुटकारा मिलता है।

तुलसीदासजी की नीति के बारे में डॉ. चरणदास शर्मा कहते हैं, - ` तुलसीदासजी भारतीय संस्कृति के प्रबल समर्थक रहे हैं। उनकी सामाजिक नीति में समाज को वास्तविक रूप में सुदृढ बनाने के तत्व निहित हैं उनकी यह नीति संकीर्ण या अनुदार नहीं अपितु अत्यन्त विशाल तथा उदारतापूर्ण है।`[१३]

काकभुशुण्डिजी कहते हैं, ` कुछ काल बीतने पर मैं फिर भगवान शिवजी की आराधना करने लगा। एक ब्राह्मण शिवजी की पूजा करते थे, परवे श्रीराम की निन्दा करनेवाले में से नहीं थे। पर मैं कपटपूर्वक उनकी सेवा करता था। लेकिन वे बडे ही दयालु थे। वे मुझे पुत्र की भाँति पढाते थे।

उन्होंने मुझे शिवजी का मंत्र दे दिया। उसीसमय मेरे हृदय में अहंकार बढ गया। मैं दुष्ट, नीच जाति और मलिन बुध्दि वाला होने के कारण मोह वश श्रीहरि के भक्तों को देखकर जल उठता था और विष्णु भगवान से द्रोह करता था। एक बार गुरूजी ने मुझे आमंत्रित किया और नीति की शिक्षा दी। उन्होंने कहा कि शिवजी और ब्रह्माजी भी श्रीराम को भजते हैं अरे अभागे, उनसे द्रोह करके सुख चाहता है ?"

"गुरूजी ने शिवजी को हरि का सेवक कहा यह सुनकर मेरा हृदय जल उठा। नीच जाति का विद्या पाकर ऐसा हो गया जैसे दूध पिलाने से साँप। इसप्रकार दिन-रात गुरूजी से मैं द्रोह करता था लेकिन गुरुजी को तनिक भी क्रोध नहीं आता था। वे बार-बार मुझे उत्तम ज्ञान, की शिक्षा देते थे, लेकिन मैं दुष्ट था। मेरे हृदय में कपट और कुटिलता भरी थी। गुरूजी हित की बात कहते थे, लेकिन मुझे वह नहीं सुहाती थी -"

"उदासीन नित रहिअ गोसाईं। खल परिहरिअ स्वान की नाईं
मैं खल हृदय कपट कुटिलाई। गुरहित कहइ न मोहि सोहाई ।।"[१४]

"एक दिन मैं शिवजी के मन्दिर में शिव नाम जप रहा था। उसीसमय गुरूजी वहाँ आये, पर मैंने उठकर उन्हें प्रणाम नहीं किया। गुरूजी दयालु थे। उन्होंने कुछ नहीं कहा, पर गुरु का अपमान बहुत बड़ा पाप है। अत: शिवजी उसे सह नहीं सके। मन्दिर में आकाशवाणी हुई कि अरे मूर्ख, अभिमानी, तुम्हें मैं शाप दे दूँगा, नीति का विरोध मुझे अच्छा नहीं लगता। जो मूर्ख गुरु से ईर्ष्या करते हैं वे करोड़ों युगों तक नरक में पड़े रहते हैं। इसप्रकार शिवजी ने मुझे सर्प का जनम दिया। काल की प्रेरणा से मैं विंध्याचल में जाकर सर्प हुआ।"

` कुछ समय बीतने पर मैंने वह शरीर त्याग दिया । इसप्रकार मैंने हर योनि में जन्म लिया । लेकिन जिस बात का दु:ख मुझे हमेशा होता रहा वह है गुरुका अपमान । `

` इसप्रकार अन्तिम शरीर मैंने ब्राह्मण का पाया था । मेरे पिताजी मुझे पढाना चाहते थे, लेकिन श्रीराम के प्रेम में मग्न रहने के कारण मुझे कुछ भी नहीं सुहाता था । पिता-माता के कालवश होने के बाद भक्तों की रक्षा करणे वाले प्रभु के भजन के लिए मैं चला गया । जहाँ जहाँ मुनीश्वर के आश्रम देखता, वहाँ जाकर श्रीरामजी के गुणों की कथा पूछता था । उस समय मेरी सभी वासनाएँ छूट गयीं और हृदय में श्रीराम के दर्शन की लालसा जाग उठी । `

` सुमेर पर्वत पर बड की छाया में लोमश मुनि बैठे थे । उन्हें देखकर मैंने उनके चरणों में सिर नवाया । मैं निर्गुण मत के विरोध में मैं था । सगुण ब्रह्म पर मेरी प्रीति बढ रही थी । इसीलिए मैंने मुनि को सगुण ब्रह्म की आराधना की प्रक्रिया कहने का आग्रह किया । `

` लेकिन मुनि ने सगुण ब्रह्म का खण्डन करके निर्गुण का निरूपण किया । मैंने सगुण का हठ नहीं छोडा इसप्रकार उत्तर-प्रत्युत्तर में मुनि को क्रोध आ गया । हे गरुडजी, बहुत अपमान सहनेपर ज्ञानी के भी हृदय में क्रोध उत्पन्न हो जाता है । जैसे कोई चन्दन की लकडी को अधिक रगडे तो उसमें भी अग्नि प्रकट हो जाती है । इसप्रकार मैं अनगिनत युक्तियां लडाता था । तब मुनि क्रोधित होकर बोले, ` अरे मूढ, मैं तुझे सर्वोत्तम शिक्षा देता हूँ, फिरभी तू नहीं मानता । मेरे सत्य वचन पर विश्वास नहीं करता । कौए की भाँति सभी से डरता है । तेरे हृदय में अपने पक्ष का बडा ही हठ है । अत: तू शीघ्र ही चाण्डाल पक्षी कौआ हो जायेगा ।

मैंने आनन्द के साथ मुनि के शाप को स्वीकार किया । मैं तुरन्त कौआ हो गया । फिर मैं मुनि के चरणों में शीर नवाकर और रघुकुल शिरोमणि श्रीरामजी के चरणों में विनम्र होकर उड चला । ' त

' तुरत मयउँ मैं काग तब पुनि मुनि पद सिरू नाइ ।
सुमिरि राम रघुबंस मनि हरावित चलेऊ उडाइ ।। '१५

' हे गरूडजी, यहाँ मुनि का कोई दोष नहीं था । प्रभुने ही उनकी बुध्दि को मैली करके मेरे प्रेम की परीक्षा ली । मन, वचन और कर्म से जब प्रभु ने मुझे अपना दास जान लिया तब भगवान ने मुनि की बुध्दि फेर दी । मुनि ने श्रीरामजी के चरणोंमें मेरा गहरा विश्वास देखा और उन्होंने ' रामचरितमानस ' का वर्णन किया और उन्होंने कहा कि यह सुन्दर ' रामचरितमानस ' मैंने शिवजी की कृपा से पाया था । तुम्हें श्रीरामजी का भक्त जानकर मैंने सब चरित्रविस्तार के साथ सुनाया । '

मुनि ने कहा, ' जिनके हृदय में श्रीरामजी की भक्ति नहीं है, उनके सामने इसे कभी नहीं कहना । मेरी कृपा से सदा राममक्ति तुम्हारे हृदय में बसेगी और तुम कल्याण स्वरूप गुणों के धाम, इच्छा मृत्यु एवं ज्ञान और वैराग्य के भण्डार हो जाओगे । तुम जहाँ निवास करोगे वहाँ से एक योजन तक अविद्या माया नहीं व्यापेगी । तुम मन में जो कुछ इच्छा करोगे श्रीहरि की कृपा से उसकी पूर्ति दुर्लभ नहीं होगी । तभी आकाशवाणी हुई - ' ऐसा ही हो ' यह कर्म, वचन और मन से मेरा भक्त हैं । '

तुलसीदासजी आकाशवाणी के बारेमें एक विद्वान कहते हैं कि - ' तुलसी ने आकाशवाणी के माध्यम से लोक संस्कृति के यथार्थ रूप का निदर्शन कराया है । '१६

` इसप्रकार हे गरुडजी, लोमश के द्वारा मुझे `रामचरितमानस ` की प्राप्ति हुई, और श्रीरामजी की भक्ति के कारण इन सब गुणों को मैंने प्राप्त किया । राममक्ति की प्राप्ति मुझे काक शरीर में हुई हैं इसलिए मुझे अपना यह काकशरीर प्रिय है । `

काकभुशुण्डिजी के अनेक जन्मों की कथा के द्वारा तुलसीदासजी ने यहाँ पहले नीति और व्यवहार का कथन किया है । फिर शिव और ब्रह्मा को रामोपासक मानकर ब्रह्मा, विष्णु, शिव और राम में समन्वय दिखाया है । तुलसी ने राम के रूप में त्रिदेव में एकता स्थापित की है । वे कहते हैं कि राम द्रोही की शिव-ब्रह्मा, विष्णु आदि देव रक्षा करने में असमर्थ हैं -

` सुनु दसकंठ मन रोपी । बिमुख राम त्राता नहीं कोपी ।
संकर सहस विष्णु अज तोही । सकहीं न राखि राम कर द्रोही ।।`

उसीप्रकार तुलसीदासजी ने गुरु की श्रेष्ठता को भी वर्णित किया है । सगुण और निर्गुण दोनों के महत्व को बताकर उन्होंने सगुण की श्रेष्ठता गायी हैं । अंत में काकभुशुण्डि के द्वारा सभी सिध्दियों की प्राप्ति राममक्ति से होती है यह दिखाकर हमें राम की आराधना करने के लिए प्रेरित किया है ।

यह सब सुनकर गरुडजी ने अत्यन्त सुख पाया और कहा, ` एक बात और पूछता हूँ हे कृपासागर । `

` ग्यानहि भगति हि अंतर केता । सकल कहहु प्रभु कृपा निकेता ।
सुनि उरगारि बचन सुख माना । सादर बोलेउ काग सुजाना ।। `१८

तब काकभुशुण्डि कहते हैं -

` भगतिहि ग्यानहि नहिं कछु भेदा । उभय हरिहिं भव संभव खेदा ।
नाथ मुनीस कहहिं कछु अंतर । सावधान सोऊ सुनु बिहंग बर ।। `

यहाँ तुलसीदासजी कहते हैं कि भक्ति और ज्ञान में कुछ भेद नहीं है, लेकिन उनके मतानुसार ज्ञान से भक्ति श्रेष्ठ है क्योंकि ज्ञान पुरूष है और भक्ति स्त्री है । पुरूष रूपी ज्ञान भक्तिरूपी स्त्रीपर मोहित होता है इसलिये उन्होंने भक्ति को ज्ञान से श्रेष्ठ कहा है । अत: ज्ञानी मुनि भी सब सुखों की खान भक्ति की याचना करते हैं ।

काकभुशुण्डि आगे कहने लगे - ` ज्ञान और भक्ति का और भी एक भेद सुनिये, जिसके सुनने से श्रीरामजी के चरणों में प्रेम निर्माण हो जाता है । `

` जीव ईश्वरका अंश है वह अविनाशी, चेतन है और माया के वश में है । यहाँ जड और चेतन की गाँठ पड गयी है । तब से वह संसारी हो गया है । पुराणों में बहुत से उपाय बतलाये हैं, लेकिन यह गाँठ नही छूटती । जीव के हृदय में अज्ञान रूपी अंध:कार विशेष रूप से छाया हुआ है यदि बुध्दि उस गाँठ को खोलने में समर्थ है, तब यह जीव कृतार्थ होता है, परंतु है पक्षिराज, गाँठ खुलते हुए जानकर माया उसमें अनेक बाधा उपस्थित करती है । वह बुध्दि को लोभ दिखाकर ज्ञानरूपी दीपक को बुझा देती है । इस विषयरूपी हवा से बुध्दि व्याकुल हो जाती है । उसी समय देवताओं को भी ज्ञान नहीं सुहाता, क्योंकि उन्हें विषय भोगों से सदा ही प्रीति रहती है । जब बुध्दि बावली है, तब ती बनती है तब ज्ञान दीपक को कौन जलायेगा ? `

" इसप्रकार ज्ञान कहने और समझाने में कठिन है। ज्ञान का मार्ग दुधारी तलवार की धार के समान है। इस मार्ग से गिरते देर नहीं लगती। जो इस मार्ग को निर्विघ्नता से निबाह लेता है वही मोक्षरूपी परम पद को प्राप्त करता है। "

" हे सर्पों के शत्रु गरुडजी, मैं सेवक हूं और भगवान राम मेरे स्वामी हैं। जो जड को चेतन और चेतन को जड कर देता है ऐसे समर्थ श्रीरघुनाथजी को जो जीव भजते हैं वे ही धन्य हैं। "

काकभुशुण्डि ज्ञान के बाद भक्ति की महिमा कहते हैं, - " श्रीरामजी की भक्ति सुन्दर चिन्तामणि हैं। यह जिसके हृदय में बैठती है वह दिन-रात परम प्रकाशरूप रहता है। उसको दीपक, घी और बत्ती कुछ भी नहीं चाहिए। फिर मोहरूपी दरिद्रता समीप नहीं आती और लोभ रूपी हवा उस मणिरूपी दीपक को बुझा नहीं सकती। जिसके हृदय में भक्ति बसती है, काम, क्रोध और लोभ उसके पास भी नहीं जाते। उसके लिए विष अमृत के समान और शत्रु मित्र होता है। "

इसप्रकार काकभुशुण्डि कहते हैं, " श्रीराम की भक्ति रूपी मणि जिसके हृदय में बसती है उसे स्वप्न में भी लेशमात्र दु:ख नहीं होता। जगत् में वे ही मनुष्य चतुर हैं, जो उस भक्ति रूपी मणि को भली-भाँति पाने का प्रयत्न करते हैं। अभागे मनुष्य उसे ठुकरा देते हैं। "

उसके बाद गरुडजी काकभुशुण्डि से कुछ और प्रश्न पूछ रहे हैं -

१) सबसे दुर्लभ शरीर कौनसा है ?
२) सब से बडा दु:ख कौनसा है ?
३) सब से बडा सुख कौनसा है ?
४) सबससे महान पुण्या कौनसा है ?
५) सब से महा भयंकर पाप कौनसा है ?

काकभुशुण्डिजी बहुत ही आदरके साथ इन प्रश्नों के उत्तर दे रहे हैं -

१) " मनुष्य शरीर के समान कोई दूसरा शरीर नहीं है । यह मनुष्य शरीर स्वर्ग-नरक और मोक्ष की सीढी है उसके द्वारा ज्ञान, वैराग्य भक्ति को पाया जाता है । ऐसे मनुष्य शरीर को धारण करते हुए भी जो लोग श्रीहरि का भजन नहीं करते वे पापी हैं । "

२) " हे पक्षिराज, जगत् में दरिद्रता के समान दु:ख नहीं है । "

३) " संतों के मिलन के समान जगत् में कोई सुख नहीं है । मन, वचन और शरीर से परोपकार करना यह संतों का स्वभाव होता है । संत दूसरों की भलाई के लिए स्वयं दु:ख सहते हैं । "

४) " वेदों ने कहा है अहिंसा और परोपरकारयह सब से बडा पुण्य है ।

५) सब से बडा पाप है परनिन्दा । जो मूर्ख लोग सब की निन्दा करते हैं, वे गीदड बन जाते हैं । "

इसके बाद काकभुशुण्डि मानस रोग बताते हैं - " सब रोगों की जड है मोह । काम वात और कफ है । क्रोध पित्त के समान है जो सदा छाती को जलाता रहता है । यदि इन तीनों में प्रीति निर्माण हुई तो दु:ख दायक रोग उत्पन्न हो जाता है । ममता दाद है ईर्ष्या खुजली है । पराये ब सुख को देख कर जिन्हें जलन होती हैं वह क्षयी है । दुष्टता और कुटिलता कोढ है । अहंकार अत्यन्त दु:ख देने वाला गाँठ का रोग है । दम्भ, कपट, मद और मान नसों का रोग है । मत्सर और अविवेक दो प्रकार के ज्वर हैं । इसप्रकार अनेक प्रकार के रोग हैं । इन पर नियम, धर्म, तप, ज्ञान, यज्ञ, जप

दान ये औषधियाँ हैं। लेकिन इनसे भी इनका परिताप नहीं होता। श्रीरामजी की भक्ति ही सब से बडा औषध है। इसप्रकार इन रोगों को हटाने के लिए राम के चरण कमलों में प्रेम करना चाहिए। राममक्ति में ही सभी का कल्याण है। ` अंत मे काकभुशुण्डि कहते हैं कि -

` राम उपासक जे जग माही। एहि सम प्रिय तिन्ह के कछु नाही।
रघुपति कृपा जथामति गावा। मैं यह पावन चरित सुहावा।।`[२०]

यहाँ गरुड के सात प्रश्न और काकभुशुण्डि द्वारा उनके उत्तर से तुलसीदास के उद्देश्य का हमें परिचय मिलता है। मनुष्य देह को सर्व श्रेष्ठ घोषित करना तथा उसके द्वारा हरिभक्ति प्राप्ति का प्रयास करना, सत्संग महात्म्य वर्णन, दुष्टों के कर्म का प्रभाव पूर्ण वर्णन ये सभी प्रसंग ऐसे हैं, जो हमें तुलसीदासजी के सामाजिक दृष्टिकोण को हमारे सामने उपस्थित करते हैं।

काकभुशुण्डि के वर्णन में हमें इन सामाजिक मूल्यों की स्पष्ट छाप दिखाई देती है। तुलसीदासजी का उद्देश्य राम के चरित गान के साथ-साथ मानव कल्याण भी था। उन्होंने अपने ` रामचरितमानस ` ग्रंथ का उपसंहार काकभुशुण्डि-गरुड संवाद के द्वारा किया है जो मानव कल्याण के लिए सर्वाधिक सहायक है। अंत में राममक्ति ही सब से श्रेष्ठ कहकर उन्होंने उसी में मानव कल्याण माना है। इसलिए उन्होंने कहा है -

` एहिं कलिकाल न साधन दूजा। जोग जग्य जप, तप व्रत पूजा।
राम हि सुमिरअ गाइअ रामहि। संतत सुनिअ रामगुन ग्रामहि।।`[२१]

तुलसीदासजी इस संवाद के द्वारा यह कहते हैं, ` प्रभु की कृपा से ज्ञान प्राप्त होता है। इसलिए वे भक्ति को ज्ञान से श्रेष्ठ कहते हुए ज्ञान को दीपक और भक्ति को चिन्तामणि कहते हैं। दीपक तो विघ्नरूपी हवा में

बुझा सकता है, लेकिन चिन्तामणि स्वयं प्रकाशित है वह विध्नरूपी हवा से बुझा नहीं सकती। ` इसप्रकार इस संवाद में तुलसीदासजी ने गरूड के प्रश्नों के उत्तर में अनेक प्रसंगों के द्वारा काकभुशुण्डि के उत्तर में रामभक्ति की महिमा गायी है।

सारांश काकभुशुण्डि-गरूड संवाद ` मानस ` का ` भक्तिघाट ` है जो सभी रामभक्तों को इस भक्ति घाट से उतर कर रामकथा रूपी जल का आस्वाद प्राप्त करा देता है।

निष्कर्ष :

तुलसीदासजी ने इस संवाद में काकभुशुण्डि के मोहजनित स्वानुभूति के प्रसंग को दिखाकर प्रभु की महिमा गाई है। वे कहते हैं कि वास्तव में सर्व जन के लिए कल्याणकारी भक्ति-पथ है। वह एक ऐसा राजमार्ग है जिस पर चलकर सभी को सफलता मिलती है। प्रभु की माया सभी ओर व्याप्त है इससे छुटकारा पाने के लिए भक्ति करनी चाहिए। श्रीरामचंद्र जी के मुख में ब्रह्माण्ड और सृष्टि को दिखाकर भगवान की व्यापकता को प्रकट किया है।

तुलसीदासजी ने कलियुग वर्णन में तत्कालीन लोगों की अनीति और व्यवहार का परिचय दिया है। तुलसीदासजी ने कलियुग वर्णन में तत्कालीन लोगों की अनीति और व्यवहार का परिचय दिया है। तुलसीदासजी लोक-मर्यादा और शिष्टता के उल्लंघन को अत्याधिक बुरा मानते हैं। इस मर्यादा के लिए ही उन्होंने काकभुशुण्डि के द्वारा मर्यादा पुरूषोत्तम राम का आदर्श उपस्थित किया है। शिव और ब्रह्मा को राम के उपासक मानकर इन तीनों के द्वारा भक्ति में समन्वय दिखाया है। उन्होंने गुरू की श्रेष्ठता को भी वर्णित किया है। तुलसी सगुण भक्त होने के कारण उन्होंने सगुण और निर्गुण के भेद को अमान्य कर के सगुण की श्रेष्ठता प्रकट की है। इस संवाद में कर्म, ज्ञान और भक्ति का समन्वय दिखाकर भक्ति को सब से श्रेष्ठ ठहराया है।

# संदर्भ सूची

१) रामचरितमानस
हनुमान प्रसाद पोद्दार
७। ५७,५८
गीता प्रेस, गोरखपुर
७३ वा संस्करण २०४५ संवत

२) वही,
७। ७३, ख

३) रामचरितमानस में तत्व दर्शन
पृ. ३१
डॉ. श्रीशकुमार
लोक चेतना प्रकाशन
जबलपुर संस्करण १९७४

४) रामचरितमानस
हनुमान प्रसाद पोद्दार
७। ७७ ख,१
गीता प्रेस, गोरखपुर
७३ वा संस्करण २०४५ संवत

५) वही
७। ८३,३

६) रामचरितमानस में भक्ति
डॉ. सत्यनारायण शर्मा
पृ. १०९
सरस्वती पुस्तक सदन आगरा
संस्करण १९७०

७) रामचरितमानस
हनुमान प्रसाद पोद्दार
७।८८, ३
गीता प्रेस, गोरखपुर
७३ वा संस्करण, २०४५ संवत

८) वही
७। ९०,२

९) तुलसी काव्य में धर्म और आचरण का स्वरूप
डॉ. चरण सखी शर्मा
पृ. १३९
प्रवीण प्रकाशन महरौली
नई दिल्ली
प्रथम संस्करण १९८४

१०) भक्ति चिन्तन की भूमिका
प्रेम शंकर
पृ. १०५
साहित्य भवन प्राइवेट लिमिटेड
इलाहाबाद, प्रथम संस्करण
१९५८

११) रामचरितमानस
हनुमान प्रसाद पोद्दार
७। १०१ (क)
गीता प्रेस, गोरखपुर
७३ वा संस्करण २०४५ संवत

१२) वही
७। १०३ (क)

१३) तुलसी काव्य में नैतिक मुल्य
डॉ. चरणदास शर्मा
पृ. २०७
भारतीय ग्रंथ निकेतन
दिल्ली
प्रथम संस्करण १९७१

१४) रामचरितमानस
हनुमान प्रसाद पोद्दार
७। १०५,८
गीता प्रेस, गोरखपुर
७३ वा संस्करण, २०४५ संवत

१५) वही
७। ११२ क)

१६) तुलसी काव्य में धर्म और आचरण का स्वरूप
डॉ. चरण सखी शर्मा
पृ. २३०
प्रवीण प्रकाशन, महरौली
दिल्ली, प्रथम संस्करण, १९८४

१७) रामचरितमानस
हनुमान प्रसाद पोद्दार
गीता प्रेस, गोरखपुर
७३ वा संस्करण २०४५ संवत

१८) वही
७। ११४, ५

१९) वही
७। ११४,७

२०) वही
७। १२९, २

२१) वही
७। १२९,३